v/;k; 7

tu vkj ck) /ke

वैदिक सभ्यता के परिणामस्वरूप समाज में ब्राह्मणों की स्थिति काफी मजबूज हो गई थी। समाज में कर्मकांड की प्रधानता थी बलि द्वारा ई वर को प्रसन्न करने की चेश्टा की जाती थी, अनेक देवी देवताओं की स्तुति होती थी और वर्ण व्यवस्था अत्यंत कठोर थी। इन सबके प्रतिक्रिया स्वरूप दो धर्म जैन धर्म और बौद्ध धर्म का उदय हुआ, जिन्होंने एके वरवाद तथा अहिंसा पर बल दिया। इस अध्याय में हम इन्ही धर्मो के बारे में पढ़ेगे।

- *जैन धर्म*
- *बौद्ध धर्म*

छठी भाताब्दी ई० पू० का काल न सिर्फ भारतीय बल्कि वि व इतिहास का भी महत्वपूर्ण काल था। इस काल में भारत, चीन, ईरान आदि में धार्मिक क्रान्तियों या सुधार आन्दोलन हुए। भारत में इस सुधार आन्दोलन के नेता बुद्ध तथा महावीर थे। इस सुधार आन्दोलन को नेतृत्व चीन में कन्फ्युि ायस और लाओजे ने किया और इसी प्रकार ईरान में जरथ्रुतट ने। इन सभी नेताओं ने तत्कालीन धर्म में प्रविश्ट बुराइयों को दूर करने एवं मानव कल्याण के लिए प्रयत्न किये।

भारत में इस आंदोलन के होने के अनेक कारण थे। इसमें से प्रमुख हैं–

1. **ब्राह्मण धर्म में दोष**– ईसा पूर्व 7 वीं और 6 वी भाताब्दियों में ब्राह्मण धर्म में अनेक अवगुण आ गए थे। वैदिक युग में जिस धर्म की कल्पना की गई थी, वह अत्यन्त सरल, आडम्बररहित एवं जटिलता से दूर थी। उसका धार्मिक अनुष्ठान सरल और सुबोध था। आर्य प्रकृति के उपासक थे और धार्मिक यज्ञ तथा कर्म में बलि प्रथा का जन्म नहीं हुआ था। किन्तु धीरे–धीरे यह धर्म अन्यन्त जटिल और आडम्बरपूर्ण हो गया। यह अनेक धार्मिक कर्मकांडों का ि ाकार बन गया। यज्ञों में बलि दी जाने लगी तथा कई धार्मिक अनुश्ठान अनेक दिनों तक चलने लगे। इस तरह का धार्मिक अनुष्ठान ब्राह्मण ही कर सकते थे और अनके द्वारा किए गए यज्ञ से मनुश्य मोक्ष प्राप्त कर सकता था। एके वरवाद समझने की क्षमता साधारण व्यक्तियों की बुद्धि से परे थी और इसी कारण इसमें अनेक देवी देवताओं की पूजा आरंभ हो गई। ब्राह्मणों की सत्ता सर्वोपरि थी। वे वैभवपूर्ण जीवन व्यतीत करने लगे और अपनी सत्ता बनाए रखने के लिए उनके आडम्बरों और जादू–टोने का सहारा लेने लगे। धीरे–धीरे इनसे लोगों का वि वास हटने लगा। ये वर्ण व्यवस्था का कठोर विरोध करने और ब्राह्मणों की धार्मिक ठेकेदारी दूर करने के लिए नए आद ों की ओर आकृश्ट होने लगे। धर्म प्रवर्तकों का कहना था कोई मनुश्य कर्म से बड़ा है जन्म से नहीं। अतः सुधारकों ने जाति–भेद और सामाजिक ऊँच–नीच के विरूद्व आन्दोलन खड़ा किया।

2. **सामाजिक बुराइयाँ**– धार्मिक क्रान्ति के सामाजिक कारण थे। तत्कालीन समाज में अनेक बुराइयां प्रवे ा कर गयी थी। वि ोशकर वर्ण व्यवस्था अनुपयोगी और अव्यावहारिक समझी जाने लगी। यह वर्ण व्यवस्था विभिन्न कार्यो को सरलता से चलाने और आर्यों की जातीय भाुद्धता कायम रखने के लिए की गई थी। किन्तु घीरे–घीरे आर्यो में भी जाति–भेद का विकास हो गया। ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों आर्य समाज में उच्च माने जाने लगे। उनमें भी जाति–भेद उत्पन्न होने लगा कि ब्राह्मण और क्षत्रिय में कौन सर्वोपरि है। ब्राह्मण अनुश्ठानों के वि ोशज्ञ होने के कारण अपने को सर्वोपरि समझने लगे थे। और समाज की विभिन्न जातियों तथा वर्गो के लिए अलग–अलग नियम बन चुके थे। ब्राह्मणों को कर नहीं देना पड़ता था तथा उन्हें प्राणदंड नहीं दिया जा सकता था। क्षत्रिय राजकुल के समझे जाने लगे ओर वै य व्यापार व्यव साय में लग गये। भाुद्रों का कार्य उपर्युक्त तीन वर्गो की सेवा करना था। अतः सामाजिक ऊँच–नीच के विरोध में सुधारकों ने आवाज उठायी। लोगों ने उनका समर्थन किया। स्त्रियों की द ाा अच्छी नहीं थी। ऋग्वैदिक काल में स्त्री तथा पुरूश दोनों को समान अधिकार थे, किन्तु

कालांतर में उनकी द ा खराव हो गयी। ई० पू० छठी भाताब्दी में स्त्रियों को कोई अधिकार नहीं रह गया था। जाति–बन्धन बहुत ही कठोर हो गया और अन्तर्जातीय विवाह बंद हो गया विधवाओं का जीवन दयनींय हो गया। भाूद्रो के समान स्त्रियों को भी ि ाक्षा से वंचित रखा जाने लगा। यज्ञ और हवन में भी उनका स्थान ब्राह्मणों ने ले लिया।

3. **वर्ण व्यवस्था की जटिलता**– वर्ण व्यवस्था की जटिलता के कारण समाज के विभिन्न वर्गो के लोगों का व्यवसाय बंटा हुआ था और वे अपने नि ि चत कर्मों में संलग्न रहते थे। ब्राह्मण, धर्म का कार्य करते थे। वे समाज में सर्वोपरि थे तथा उन्हें सभी राजनीतिक अधिकार प्राप्त थे। क्षत्रिय भाासन में उनसे पराम ि लिया करते थे। क्षत्रियों का कार्य राजकाज करना, युद्व करना, प्रजा की रक्षा करना तथा दे ा को समृद्ध बनाना था। क्षत्रिय और ब्राह्मणों का संबंध राजनीति के क्षेत्र में अटूट था। वर्ण व्यवस्था की जटिलता के कारण समाज में बड़ा असंतोश था। धर्म–प्रवर्तकों ने इस असन्तोश को उभाड़ा।

4. **स्वतन्त्रता का हनन**– प्रांरभ से ही आर्य स्वतन्त्रता प्रेमी थे। वैदिक काल में पूर्ण व्यक्तिगत स्वतन्त्रता संकुचित हो गई। इसका कारण ब्राह्मणों और क्षत्रियों की प्रभुसता थी जिसके चलते उनके बौद्धिक विकास में बाधा पहुँची। क्षत्रिय, वै य एवं भाूद्र बहुसंख्यक थे। किन्तु ब्राह्मणों ने अपने स्वार्थ के लिए उनके कार्यो की व्यवस्था अलग–अलग कर दी। परिणामस्वरूप उनका पारस्परिक संबंध विशमताओं से भर गया। आर्यों की राजनीतिक व्यवस्था इतनी अच्छी थी कि उनमें प्रजातान्त्रिक भावना बनी हुई थी। जनसाधारण में स्वतन्त्रता की प्रारित होने के कारण तर्कभाीलता का आरम्भ हुआ। जब ब्राह्मणों ने उन्हें हीन समझा तब उन्होंने अंधवि वास पर आधारित धार्मिक व्यवस्था का विरोध किया। ईसा पूर्व छठी सदी में जब सुधार कों एवं धर्म प्रवर्तकों ने एक नया आद ि उनके सम्मुख रखा तब उनकी सोई स्वतंत्रता की भावना जाग उठी।

5. **धर्म सुधार आन्दोलन के प्रवर्तक**– छठी सदी ई० पू० के धार्मिक आन्दोलनों एकमात्र उद्दे य समाज के पददलित वर्गो को ऊॅचा उठाना और उनके सम्मुख पवित्र जीवन व्यतीत करने का आद ि रखना था। महावीर तथा गौतम बुद्ध ने अपने अनुयायियों को छोटे–छोटे समुदायों में बाँटकर दे ा के विभिन्न भागों में धर्म प्रचार के लिए भेजा। भिक्षुओं का जीवन सरल और त्यागमय था। अतः उनके व्यक्तित्व का प्रभाव तत्कालीन समाज पर पड़ा। अतः ये धर्म भाीघ्र ही लोकप्रिय हो गये।

t\u /ke\

जैन धर्म का अभ्यूदय– जैन धर्म एक अति प्राचीन धर्म है जिसका जन्म वैदिक काल में ही हुआ था। इसके द ान एवं सिद्धांत हिंदू धर्म से पूर्णत अलग हैं। जैन धर्म के प्रवर्तक ऋशभदेव थे जो इस धर्म के प्रथम तीर्थकर थे। जो साधक अद्भुत सिद्धि प्राप्त करके कैवल्य (ज्ञान) प्राप्त कर लेता था वही तीर्थकर कहलाता था। जैन धर्म में कुल 24 तीर्थकर हुए।

ऋषभदेव– ऋग्वेद में ऋशभदेव का उल्लेख है। यजुर्वेद में कहा गया है कि ऋशभदेव धर्म प्रवर्तकों में श्रेश्ठ है। उन्होंने अपने ज्ञान से लोगों को आलोकित किया तथा सनमार्ग और सदाचरण का दिग्द ान कराया। उनका जन्म इच्छवाकु वं ा में हुआ था। दीर्घकाल तक भाासन करने के उपरांत उन्होंने अपने पुत्र भरत को राज्य सौपकर स्वयं सन्यास ग्रहण कर लिया। कैला ा पर्वत पर तपस्या करते समय उनकी मृत्यु हो गयी। उन्होंने सर्वप्रथम पावन आचरण, पावन चरित्र और पावन मन पर जोर दिया।

पार्श्वनाथ– जैनियों के तेईसवें तीर्थकर पा र्वनाथ थे। उनका जन्म वाराणसी में 850 ई० पू० में हुआ था। का ाी के इच्छवाकु वं ाीय भाासक अ वसेन उनके पिता थे तथा महारानी वाम उनकी माता थी। उनकी पत्नी का नाम प्रभावती था जो कु ास्थल दे ा की राजकुमारी थीं। तीस वर्श की अवस्था में उन्होंने घर छोड दिया। सम्मेय पर्वत पर समाधिस्थ होकर कठिन तपस्या करने के उपरांत उन्हें 84 वें दिन कैवल्य (ज्ञान) प्राप्त हुआ । इसके प चात् साकेत राजगृह, अहिच्छत्र, हस्तिनापुर, कौ ाम्बी श्रावस्ती आदि विभिन्न नगरों का भ्रमण कर उन्होंने अपना धर्म प्रचार किया। उनके अनुयायी निर्ग्रन्थ कहे जाते है। जैन ग्रंथो में पा र्वनाथ को "पुरिसादानीय" (महान पुरूश) धर्म तीर्थंकर तथा "जिन" (विजेता) कहा गया है।

पा र्वनाथ ने काया क्ले ा और तपस्या से मोक्ष प्राप्ति का मार्ग द र्ान किया। उनके अनुयायी चार व्रतों (चतुर्यौम धर्म) अहिंसा करना, सत्य बोलना, चोरी न करना और धन जमा न करना का पालन करते है। इस प्रकार, पा र्वनाथ ने सत्य, अहिंसा, अस्तेय और अपरिग्रह का उपदे ा दिया। उनके अनुयायी उनके धर्म जिनकल्प को मानते थे और समधि लगाते थे। वे पॉच तत्वों (तपस, सत्य, सूत्र, एकत्व और बल) को मानते थे। भद्रबाहु के कल्पसूत्र से ज्ञात होता है कि पा र्वनाथ का निधन विहार स्थित पारसनाथ नामक पहाड़ी के सम्मेत ि ाखर पर हुआ था। यह आज भी जैनियों का एक पवित्र तीर्थस्थान है।

महावीर– वर्द्धमान महावीर का जन्म वै ाली के निकट वज्जि संघ के कुंड ग्रामवासी विख्यात ज्ञातृक क्षत्रिय सरदार सिद्धार्थ के यहॉ 540 ई० पू० में हुआ था। कुछ विद्धानों ने उनका जन्म 546 ई० पू० और 468 ई० पू० भी माना है। उनकी माता का नाम त्रि ाला था, जो लिच्छवी शासक चेटक की बहन थी। उनकी पत्नी का नाम यशोदा था। जो समरवीर नरे ा की पुत्री थी। उससे प्रियद र्ना नामक एक पुत्री उत्पन्न हुई थी। जिसका विवाह जमालि नामक क्षत्रिय से हुआ। महावीर के माता पिता पा र्वनाथ के अनुयायी थे जिसका प्रभाव वर्द्धमान पर पड़ा। उन्होंने तीस वर्श की अवस्था में अपने पिता के निधनोपरान्त गृह–त्याग कर निवृति मार्ग ग्रहण किया।

महावीर सत्य ज्ञान की खोज में इधर–उधर भ्रमण करने लगे। तेरह महीने तक तो वे वस्त्र धारण किए हुए सर्वत्र धूमते रहे, किन्तु बाद में वे निर्वस्त्र होकर धूमने लगे। बारह वर्शो तक उन्होंने बड़ा कश्टमय जीवन बिताया। तेरहवें वर्श जम्मियग्राम के निकट ऋजुपालिका नदी के तट पर उन्हें "कैवल्य" (ज्ञान) प्राप्त हुआ। ज्ञान प्राप्ति के कारण उन्हें "केवलिन्", इन्द्रियों को जीत लेने के कारण "जिन", बंधनहीन होने के कारण "निर्ग्रन्थ" तथा योग्यतम या पूज्य होने के कारण "अर्हत्" कहा गया। उनका यह अद्भूत पराक्रम था, इसलिए वे महावीर के नाम से विख्यात हुए।

कैवल्य प्राप्त कर लेने के प चात् महावीर अपने उपदे ाों के प्रचार में लग गए। इस काम में उन्हें अनेक कश्ट उठाने पड़े। कुछ लोग उन्हें पागल समझकर ईट डंडे से मारते थे। कुछ लोग उनके पीछे कुत्ते दौड़ाते थे। लेकिन महावीर ने उन पर कोई ध्यान नहीं दिया ओर निर्भीक होकर अपने मत का प्रचार किया। उनका विचार था कि जीवन सभी रूपों में है तथा वनस्पति से मनुश्य तक सभी प्राणी जन्म–जरा–मरण के क्रम मे आबद्ध है।

महावीर अपने आकर्शक व्यक्तित्व और अद्भुत ज्ञान से लोगों के प्रभावित कर लेते थे। लिच्छवि भाासक चेतक, चम्पा का भाासक दधिवाहन, पाटलिपुत्र का राजा उदायिन आदि उनके भक्त थे। दधिवाहन की पुत्री चन्दना उनकी प्रथम भिक्षुणी बनी थी। का ाी और कौ ाल के अठारह गणराज्य उनके अनुगामी थे। राजपरिवारों के अतिरिक्त साधारण वर्ग के लोग भी उनकी ि ाक्षाओं और उपदे ाों से प्रभावित थे। उनके ग्यारह प्रधान ि ाश्य थे। जिन्हे "गणधर" (प्रधान अनुयायी) कहा जाता है। वे गणधर प्रारंभ में ब्राह्मण धर्म के अनुयायी थे। ये महावीर की ि ाक्षा से प्रभावित होकर उनके अनुयायी बन गए। कालान्तर में ये गणधर द्वाद ा अंगों और चतुर्दि ा पर्वों में प्रवीण हो गए।

जैन धर्म के सिद्धांत– जैन धर्म का प्रमुख सिंद्धात निवृत्ति मार्ग है। इसके द्वारा व्यक्ति जगत की नाना प्रकार की व्याधियों और तृश्णाओं से मुक्त हो जाता है। प्रवृति का त्याग करके निवृति का अनुपालन करना ही वास्तवितक और स्थायी सुख का मूल है। परिव्राजक की स्थिति में ही भाांति प्राप्त होती है। जब मनुश्य समस्त तृश्णाओं–लिप्साओं से अलग होकर निवृति की ओर बढ़ता है।

जैन ज्ञान तत्व के अन्तर्गत कर्म का सिंद्धात महत्वपूर्ण है। संसार में कर्म ही प्रधान है। मनुश्य के सुख–दुःख उसके कर्म पर ही निर्भर करते हैं। प्रायः आठ कर्मो के कारण जीव आबद्ध रहता है। ज्ञानावरण (आत्मा के ज्ञान को ढकलेने वाला) द र्ानावरण (आत्मा की द र्ान भाक्ति को आवृत्त करने वाला) वेदना (सुख दुःख के ज्ञान को अवरूद्ध करने वाला) मोह (जीव को मोह के आवरण मे ढकने वाला) आयु कर्म (मनुश्य की आयु को नि ि चय करने वाला कर्म) नाम कर्म (व्यक्ति की परिस्थिति, गति, भारीर, आदि को निर्धारित करने वाला कर्म) तथा अंतराय कर्म (सत्कर्मो में विध्न डालने वाला कमी)। अतः समस्त प्राणी अपने कर्मो के अनुरूप संसार में बार–बार जन्म लेते है और कर्मफल भोगते है। कर्मफल से मुक्त होना ही निर्वाण है। निर्वाण ही मोक्ष है, जो कर्मफल की समाप्ति से संभव है।

कर्मफल की समाप्ति के लिए जैन धर्म की आचार मीमांसा से त्रिरत्न की व्यवस्था है। ये त्रिरत्न सम्यक् श्रद्धा, सम्भक् ज्ञान और सम्यक् चरित्र है। सत्य का ज्ञान ही सम्यक् ज्ञान है। सच्चरित्रता का पालन सम्यक् चरित्र है। सम्यक् श्रद्धा

(द ान) के आठ अंग हैः निर ांकित (संदेह से दूर), निश्कांक्षित (सांसारिक सुख की अभिलाशा को समाप्त करना), निर्विचिकित्सक (काया के मोह विराग से दूर रहना), अमूढ दृश्टि (भ्रामक मार्ग की ओर प्रवृत्त होना) उपगूहन (अधूरे वि वासों से विचालित न होना) स्थितिकरण (सही वि वासों पर टिके रहना) वात्सल्य (सबके लिए प्रेम–भाव रखना) एवं प्रभावना (जैन सिद्धांत की श्रेश्ठता प्रद ित करना)। इसके लिए तीन प्रकार की अज्ञानता–लोकमूढ (उदाहरण के लिए नदी में स्नान करने से पाप से मुक्ति का अंधवि वास) देवभूढ (जैसे देवताओं की पूजा करने से पुण्य प्राप्त करने का अंधवि वास) एवं पाशंडमूढ (उदाहणार्थ साधु–संतो के धोखे में आना) से दूर रहने को कहा गया है।

जैन सिद्धांत में सम्यक् ज्ञान के पाँच प्रकार बताए गए है।

1. मति (इन्द्रियों द्वारा अनुभूत ज्ञान)
2. अवधि (कही रखी हुई किसी वस्तु का दिव्य ज्ञान)
3. श्रुति (सुनकर प्राप्त ज्ञान)
4. मनः पर्याय दूसरे के हद्वय और मास्तिक की बातों का बोध होने का ज्ञान)
5. कैवल्य (पूर्ण ज्ञान जो परिव्राज कों और निग्रन्थों प्राप्त होता है)।

जैन धर्म में सम्यक् चरित्र के अन्तर्गत पंच महाव्रत की व्यवस्था की गई है। ये पंच महाव्रत हैं अहिंसा, सत्य, अस्तेय् अपरिग्रह एवं ब्रह्मचर्य। अहिंसा के पालन के अंतर्गत पाँच समितियों का निदे ा किया गया हैः–

ईर्या समिति (ऐसे मार्ग से चलना जहॉ छोटे कीडे मकोडे न कुचले जाएँ),

एशणा समिति, (भोजन में किसी प्रकार भी छोटे कीड़ो की हिंसा न हो सके।)

भाशा समिति (कटु भाशा बोलकर किसी को क्लेष न पहुँचाना)

व्युत्सर्ग समिति (मल–मूत्र ऐसे स्थान पर त्याग न करना जहाँ कीटाणुओं की हिंसा हो)

1. आदान अपेक्षा समिति (अपने सामानों का उपयोग करते समय भिक्षु द्वारा जीवाणुओं की हिंसा न होने देना)। सत्य–भाशण के अन्तर्गत सर्वदा सत्य बोलने का निर्दे ा किया गया है। "अस्तेय" का अर्थ है चोरी न करना। "अपरिग्रह" का अर्थ है–धन इकट्ठा न करना। "ब्रह्मचर्य के अन्तर्गत भिक्षु के लिए कई निर्दे ा दिए गए हैं। जैसे वह किसी स्त्री से संभाशण न करने, किसी स्त्री को न देखे, नारी संपर्क की भावना मन में न लाये। भाुद्ध और सत्य आहार करें, अकेली रहने वाली स्त्री के घर न जाएँ। पंचमहाव्रत के अतिरिक्त चार अणुव्रत के परिपालन पर भी जोर दिया गया।

   मैत्री (सबके साथ मित्रता का भाव रखना)

   प्रमोद (दूसरों की प्रगति से प्रसन्न होना)

   कारूण्य (दुःखियों के प्रति दया रखना)

   माध्यस्थ (दुश्ट व्यक्तियों की बातों पर ध्यान न देना)

   आचरण के हिए सात भीलव्रत वांछनीय माने गये। ये है–

   1. दिग्व्रत (किन्हीं वि ोश दि ाओं में अपनी क्रिया सीमित रखना)।
   2. दे ाव्रत (किन्हीं वि ोश क्षेत्रों में अपना कार्य सीमित रखना)।
   3. अनर्थ दंडव्रत (अकारण अपराध न करना)।
   4. सामाजिक (समय के कुछ भाग को अपने ऊपर विचार के लिए रखना)।
   5. प्रोशधोपवास (महीने में चार दिन दोनों अश्टमी तथा दोनों चतुर्द ाी को व्रत रखना)।

6. उपभोग–प्रतिभोग– परिमाण (वस्तुओं और पदार्थो के दैनिक उपभोग को नियमित करना) तथा
7. अतिथि संविभाग (दूसरों, साधुओं और उपासकों को भोजन कराने के बाद भोजन करना)।

जैन धर्म में भारीर के कश्ट देकर साधना का मार्ग दर्ि ात किया गया है। मन और काया की भाुद्धि पर वि ोश बल दिया गया है। सत्कर्म का पालन करने वाले व्यक्ति को उच्च माना गया है। सत्कर्म के लिए अठारह पापों से मुक्त होना आव यक है।–

(1) प्राणातिपात (हिंसा), (2) झूठ, (3) चोरी, (4) मैथुन, (5) द्रव्य–मूर्च्छा (परिग्रह), (6) क्रोध, (7) लोभ, (8) मान, (9) राग, (10) द्वेश, (11) कलह, (12) दोशारोपण, (13) चुगली, (14) असंयम में रति, (15) संयम में अरति, (16) पर परिवाद (निन्दा), (17) मायामूशा (कपटपूर्ण मिथ्या) तथा (18) मिध्याद र्ान रूपी भाल्य। इन पापों से मुक्त होने पर निर्वाण प्राप्त होता है।

जैन धर्म के मूल सिंद्धात निम्नलिखित हैः–

1. **सृष्टि की नित्यता**– जैन धर्मानुसार सृश्टि नित्य है, अर्थात इसका आदि और अंत नहीं होता न तो इसको कोई बनाने वाला है न विगाड़ने वाला ही। यह सृश्टि यह अविना ाी तत्वों जीव पुद्गल, धर्म, अधर्म, आका ा और काल के संयोग से बनी है। चूंकि ये तत्व भााश्वत और अविना ाी है, सृश्टि भी भााश्वत नित्य तथा अविना ाी है।
2. **अनीश्वरवाद**–जैन ई वर को नहीं मानते। वे केवल तीर्थकरों की पूजा करते हैं। ये तीर्थकर आत्मा के बंधन से मुक्त, पूर्ण–सर्वज्ञ, सर्व–भाक्तिमान तथा दुःख रहित है।
3. **आत्मवाद**– जैन आत्मा के अस्तित्व तथा अमरत्व में वि वास करते है। आत्मा सर्वद्रश्टा और सर्वज्ञानी है।
4. **कर्मवाद**– जैन कर्म की प्रधानता मानते है। सुख–दुःख मनुश्य के कर्म पर निर्भर करते है। जब आत्मा कर्मबंधन तोड़ देती है तब वह सुख–दुःख से मुक्त हो जाती है और मनुश्य को मोक्ष मिल जाता है।
5. **ज्ञानवाद**– जैन ज्ञानवाद पर जोर देते है। तीर्थंकरों की आदे ाों से सम्यक् ज्ञान प्राप्त होता है। इसके फलस्वरूप मनुश्य काम, क्रोध, मोह तथा लोभ को छोड़ देता है और उसे मोक्ष प्राप्त से जाता है।
6. **स्यादवाद**– ज्ञान सात प्रकार का हो सकता है।

   (1) है (2) नही है, (3) है और नहीं है, (4) कहा नहीं जा सकता, (5) है किन्तु कहा नहीं जा सकता, (6) नहीं है और कहा नहीं जा सकता, (7) है, नहीं है और कहा जा सकता है। इन्हें स्यादवाद के नाम से संबोधित किया गया है। इसका अर्थ है कि एक ही वस्तु को विभिन्न दृश्टि कोणों से देखने पर वह विभिन्न रूपों में दिखाई देती है।
7. **त्रिरत्न**– सम्यक् ज्ञान, सम्यक् द र्ान तथा सम्यक् चरित्र को त्रिरत्न कहा गया है। सम्यक् ज्ञान का अर्थ है सच्चा और पूर्ण ज्ञान जो तीर्थकरों के उपदे ा से प्राप्त होता है। सम्यक् द र्ान का अर्थ है सभी व्यक्ति सभी प्राणियों को एकसमान समझें और तीर्थंकरों के अस्तित्व पर वि वास करें। सम्यक् चरित्र का अर्थ है कि मनुश्य अपने मन, वचन और कर्म पर नियंत्रण रखकर अपने चरित्र का गठन करे। इस त्रिरत्न की प्राप्ति के प चात् मनुश्य की आत्मा कर्म–बंधन से मुक्ति प्राप्त कर लेती है।
8. **पंचमहाव्रत**– अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह तथा ब्रह्मचर्य को पंचमहाव्रत कहा गया हैं। हिंसा के लिए प्रोत्साहित नहीं करना चाहिए। सत्य को पूरा करने के लिए मनुश्य को क्रोध, लोभ और भय तीनों का परित्याग करना चाहिए। अस्तेय का अर्थ है बिना आज्ञा या अनुमति के किसी की वस्तु को नहीं लेना। अपरिग्रह का अर्थ है आव यकता से अधिक धन का संग्रह नहीं करना चाहिए। ब्रह्मचर्य का अर्थ है सभी विशय–वासनाओं का परित्याग। इसके द्वारा ही चरित्र निर्माण संभव है।
9. **तपस्या**– जैन धर्म में तपस्या पर अधिक बल दिया गया है। तपस्या द्वारा इन्द्रियों को व ा में किया जात सकता है। अपने भारीर को कश्ट देना ही तपस्या है। पापों का प्रायर्ि चत करने के लिए विनय, सेवा, ध्यान एवं स्वाध्याय है।

10. **निवृत्ति मार्ग**– जैन धर्म के सिद्धान्तों में निवृत्ति मार्ग का प्रधान स्थान है। जगत् के सभी सुखों का त्याग ही निवृत्ति मार्ग हैं। इस प्रकार जैन धर्म में निर्वाण या मोक्ष प्राप्ति के लिए उपर्युक्त सिद्धांतों का प्रतिपादन किया गया है।

जैन संघ– महावीर के जीवन काल में ही जैन संघ की स्थापना हुई। इसके सदस्य चार भागों में विभक्त थे। भिक्षु, भिक्षुणी, श्रावक एवं श्रावकी। प्रथम दो वर्ग संसार त्यागने वाले परिव्राजकों के थे और अंतिम दो वर्ग गृहस्थों के । जैन संघ में रहने वाले श्रमणों के लिए पंच महाव्रत का पालन आव यक था। वे वर्शा ऋतु के अतिरिक्त सर्वदा भ्रमण किया करते थे और भिक्षाटन द्वारा जीवन निर्वाह करते थे। देवस्थान, सभामंडप, पारिवारिक–आवास, उद्यान गृहों में उनका ठहराना वर्जित था। भिक्षु प्रायः साधु व भाुद्ध प्रकृति के होते थे तथा अनु ाासन, त्याग और अनासक्त जीवन का पालन करते थे। आचारांग सूत्र में उनके लिए कठोर नियम बनाए गए थे। मन, वचन और कर्म से भाुद्ध रहना उनके लिए परम आव यक था।

जैन सम्प्रदाय– महावीर के मृत्यु के उपरान्त जैन धर्म प्रमुखतः दो सम्प्रदायों–भवेताम्बर और दिगम्बर में बंट गया। भवेताम्बर वे थे जो सफेद वस्त्र पहनते थे तथा दिगम्बर वे थे जो निर्वस्त्र (नंगे) रहते थे। गृह त्याग के तेरह महीने बाद महावीर ने यह अनुभव किया कि वस्त्रों का बंधन भी न रहे, और तब से वे निर्वस्त्र (नंगे) रहने लगे। अतः नग्न रहने का आचार जैन धर्म में आरंभ हुआ। भवेताम्बर वस्त्र पहनते है तथा इसे मोक्ष प्राप्ति में बाधा नहीं मानते किंतु दिगम्बर वस्त्र नहीं पहनते है तथा वस्त्र को मोक्ष प्राप्ति में बाधक मानते है।

कालान्तर में भवेताम्बर सम्प्रदाय के तीन उपसम्प्रदाय हो गए – (1) पुर्जराया (मूर्ति–पूजक या मंदिरमार्गी), (2) ढुढिया अथवा विस्तोला व (3) साधुमार्गी एवं तेरापंथी। पुजेरे मूर्तियों को वस्त्राभूशणों से सुसज्जित करके पूजा करते है। साधुमार्गी मूर्तिपूजा नहीं करते। 1760 ई0 में भिक्खन महाराज ने तेरापंथी सम्प्रदाय चलाया। इनके अनुदायी जैन सिद्धान्तों का अनुगमन करते है।

दिगम्बरों में भी तीन उप–सम्प्रदाय बन गए– (1) बीसपंथी, (2) तेरहपंथी एवं (3) तारण पंथी। बीसपंथी तीर्थकर क्षेत्रपाल, भैरव आदि की मूर्तियां पूजते हैं। तेरापंथी अपने मंदिरों में केवल तीर्थकरों की मूर्तियां रखते है। इसका एक उपसम्प्रदाय तारणपंथ था जिसे 15 वीं भाताब्दि से तरण–तारण स्वामी ने चलाया था। ये लोग मूर्तियों की पूजा नहीं करते थे। दिगंबरों में गुमानपंथी और तोतापंथी संप्रदाय भी है जिनका समाज पर बहुत कम प्रभाव है।

जैन साहित्य– महावीर के मूल उपदे ा 14 जिल्दों में संकलित थे जिन्हें पर्व कहा जाता था। ई० पू० चौथी भाताब्दी में जैन साधु जब दक्षिण भारत गए तो उन चौदह पर्वो का भोश जैन साधुओं ने एक नया संकलन तैयार किया जिसे बारह अंग कहा जाता है। ये है– (1) आचारागसूत्र (आचारांगसूत्र), (2) सूयगडंग (सूत्रकृतांग), (3) थाणंग (स्थानांग), (4) समवायांग, (5) भगवती सूत्र, (6) नायाधम्मकहाओं (ज्ञाताधर्मकथा), (7) अणुत्तरोववाइयदसाओ (अनुत्तरौपपादिकद ाां) (8) पण्हावागरणिआई (प्र नव्याकरणानि), (9) विवानासुचं (विभाकसुनम), (10) दिटिटवाय (दृश्टिवाद), (11) उवास–गदसाओं (उपासक दशा), (12) अंतगड़दसाओ (अन्तकृछश)

भवेताम्बर सम्प्रदाय के अनेक आचार्यो ने महत्वपूर्ण ग्रन्थों की रचनाएँ की । भद्रबाहु प्रथम (433–357 ई० पू०) ने "निर्युक्ति" और "भद्रबाहु संहिता" की रचना की। भद्रबाहु द्वितीय (प्रथम सदी) ने "न्याय ाास्त्र" लिखा। उमास्वाति ने (पहली सदी) "तत्वार्थाधिगम सूत्र" की रचना की। भद्रबाहु द्वितीय के ि ाश्य कुन्दकुन्दाचार्य (पहली सदी) ने "समयसार", "पंचास्तिकाय", "प्रवचनसार", "नियमसार" आदि ग्रन्थों की रचना की। सिद्धसेन दिवाकर ने "सम्मतितर्कसूत्र", "न्यायावतार" आदि लिखा। हरिभद्रसूरि (705–775) ने संस्कृत और प्राकृत में अनेक ग्रन्थ लिखे जिनमें न्यायावतारवृति, "न्यायप्रवे ा सूत्र" ाड्द ान समुच्चय आदि उल्लेखनीय है। हेमचन्द्र (12वीं सदी) लिखित "प्रमाण मीमांसा" और परि ाश्टपर्वन महत्वपूर्ण है। दिंगबर आचार्यों में विद्यानन्द, माणिक्यनन्दन (नवीं सदी), प्रभाचन्द, अमृतचन्द सूरि, देवसेन, भटटारक अनंतवीर्य (10वीं सदी), नेमीचन्द (11वीं सदी) ज्ञानचंद (14वी संदी) धर्मभूशण (16वी सदी) आदि प्रसिद्ध है।

जैन धर्म का प्रचार– महावीर ने सारा जीवन धर्म–प्रचार में लगाया। वै ाली का लिच्छवि भाासक चेतक महावीर स्वामी का भक्त था। उसकी आठ रानियां भी इस धर्म में श्रद्धा रखती थीं। उदयन भी जैन धर्म का अनुन्यायी बन

गया। अनके स्त्री पुरूश जैन धर्म के अनुयायी बन गए। निर्वाण के पहले महावीर ने अपने प्रधान ि ाश्य इन्द्रभूति को जैनियों का प्रधान वनाया। "इन्द्रभूति" ने इस धर्म का प्रचार किया। धर्म प्रचार के लिए महावीर ने एक संध गठित किया, जिसके सदस्यों की संख्या चौदह हजार थी।

एक परम्परा के अनुसार चन्द्रगुप्त मौर्य (322–298 ई० पू०) ने कर्नाटक में जैन धर्म का प्रचार किया। वृद्धावस्था में चंन्द्रगुप्त अपना राज–पाट छोड़कर, जैन गुरू भद्रबाहु का ि ाश्य बन गया था। इसके बाद गुरू और ि ाश्य दोनों मिलकर दक्षिण में जाकर श्रवणबेलगोला नामक स्थान पर बस गए। चन्द्रगिरि नामक छोटी सी पहाड़ी पर चन्द्रगुप्त तपस्या किया करता था। वहीं उसकी मृत्यु हुई।

महावीर के निर्वाण के 200 वर्शो बाद मगध में भीशण अकाल पड़ा अनेक जैन धर्मावलबी भद्रबाहु के साथ दक्षिण की ओर चल पड़े। कुछ लोग स्थूलबाहु के नेतृत्व में मगध में ही रह गए। प्रवासी जैनियों ने भी धर्म का प्रचार किया। अकाल समाप्त होने पर दक्षिण भारत से प्रवासी जैन लौट आए उनका कहना था कि अकाल की स्थिति में भी उन्होंने बड़ी कठोरता से जैन धर्म के सिद्धान्तों का पालन किया है। लेकिन मगधवासी जैनियों ने ऐसा नहीं किया। अतः दोनों के विचारों में सामंजस्य उत्पन्न करने और भेदभाव दूर करने के लिए पाटलिपुत्र में जैन मुनियों की एक परिशद् बुलाई गई। इसका उद्दे य जैन धर्म के उपदे ाों या सिद्धांतों का संकलन करना था। लेकिन दक्षिण के जैनियों ने परिशद् में सम्मिलित होने से इंकार कर दिया। इसी समय से दक्षिण के जैन दिगंबर तथा मगध के जैन भवेताम्बर कहलाने लगे।

चौथी सदी ई० पू० में कलिंग (उड़ीसा में) जैन धर्म का प्रचार हुआ। कालिंग नरे ा खारवेल ने इसे प्रश्रय दिया (खारवेल ने मगध और आंध्र के राजकुमारों को पराजित किया था। कालान्तर में मालवा गुजरात और राजस्थान में जैन धर्म का प्रचार हुआ। राश्ट्रकूट, गंग, कदम्ब और चालुक्य वं ा के जयसिंह सिद्धराज और कुमारपाल जैसे भासकों ने इसका प्रचार किया। यद्यपि बौद्ध धर्म की तरह जैन धर्म को राजकीय संरक्षण प्राप्त नहीं हुआ तथापि जहाँ भी इसका प्रचार हुआ, वहाँ आज भी इसके अनुयायी है।

जैन सभा– जैन धर्म की प्रथम सभा चन्द्रगुप्त मौर्य के समय हुयी थी। इसे स्थूल भद्र ने आहूत की थी। उसी समय जैन सिद्धांतों का 12 अंगों में संकलन किया गया। दूसरी जैन सभा 512 ई0 में वल्भी के जैन साधु देवधिंगणि की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। इस सभा में अंगों की रचनाओं के संकलन के साथ 84 आगमों की भी संख्या नि ि चत हुई तथा 12 उपांग भी संकलित किए गए।

जैन धर्म की देन– जैन धर्म ने वर्ण–व्यवस्था की कठोरता दूर करने का प्रयास किया। जैनियों ने संस्कृत भाशा त्याग दी तथा प्राकृत भाशा अपनायीं। प्राकृत लोकभाशा थी। जैनियों का धार्मिक साहित्य अर्द्ध मागधी में लिखा गया। छठी सदी में गुजरात के बल्लभी नामक स्थान में जैन ग्रन्थों का अंतिम रूप से संकलन किया गया। वल्लभी ि ाक्षा का मुख्य केन्द्र था। प्राकृत भाशा के कारण अनेक क्षेत्रीय भाशाओं वि ोशतः सूरसेनी का विकास हुआ, जिससे मराठी भाशा का उद्भव हुआ। जैनियों ने प्रारंभिक धर्म ग्रंथों को अपभ्रं ाों में लिखा। जैन साहित्य में महाकाव्य पुराण, उपन्यास एवं नाटक है। अभी भी जैन साहित्य काफी संख्या में पांडुलिपि के रूप में है। आरा (बिहार), गुजरात और राजस्थान के जैन मंदिरों में ये पांडुलिपियां सुरक्षित है।

ck) /keZ % xkSre cq)

जैन धर्म की भांति बौद्ध धर्म का भी अभ्युदय हिन्दू धर्म के विरोध में हुआ था। इस के आदि प्रवर्तक गौतम बुद्ध थे। उनका मूल नाम सिद्धार्थ था। उनका जन्म 563 ई० पू० में लुम्बनी नामक वाटिका में हुआ था। कहा जाता है कि जन्म होने पर वे खड़े हो गए, सात डग भरे और कहा यह मेरा अंतिम जन्म है। इसके बाद मेरा कोई जन्म नहीं होगा। उनके पिता का नाम भुद्धोधन और माता का नाम मायादेवी था। भुद्धोधन हिमालय तटवर्ती कपिलवस्तु गणराज्य के भाक्यवं ाी भासक थे। सिद्धार्थ के जन्म के सातवें दिन उनकी माँ महामाया की मृत्यु हो गयी, उनकी मौसी महाप्रजाति गौतमी ने उनका पालन–पोशण किया। उनका गोत्र गौतम था, इसलिए उन्हें गौतम भी कहा गया। गौतम के विशय में ज्योतिशियों ने भविश्यवाणी की थी कि या तो वे विख्यात ज्ञानी होंगे या चक्रवर्ती सम्राट। राजा भुद्धोधन

यह नहीं चाहते थे कि सिद्धार्थ सन्यासी बने। उन्होंने सिद्धार्थ को अत्यंत भोग–विलास में रखा, ताकि वे संसार के सुखों से विचलित न हो सके। उन्हें प्रारंभ में विभिन्न विशयों तथा अस्त्र– ास्त्र की ि ाक्षा दी गई।

बचपन से ही सिद्धार्थ चिंतन ील प्रकृति के थे। एक बार बचपन में ही वृद्ध, रोगी तथा मृतक को पहली बार देखकर वे कॉप गए थे और दुःख से छुटकारा पाने का उपाय सोचने लगे। युवावस्था के प्रथम चरण में प्रवे ा करते ही सिद्धार्थ एकान्त स्थान में बैठकर जीवन मृत्यु एवं दुःखों पर घंटों चिन्तन करने लगे। यह देखकर उनके पिता काफी चिन्तित हुए और उन्होंने सिद्धार्थ का विवाह एक परम सुन्दरी कन्या य ोधरा के साथ करा दिया। य ोधरा, रामग्राम के कोलिय ग्राम की राजकुमारी थी। सिद्धार्थ ने लगभग बारह वर्शो तक गृहस्थ जीवन व्यतीत किया। इसी बीच इन्हें एक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्र जन्म की खबर पाकर उन्हें कोई प्रसन्नता नही हुई उनका मन और खिन्न हो गया । उन्होंने कहा ''राहू आ गया।'' इसलिए पुत्र का नाम राहुल पड़ गया। जन्म, जरा, रोग मृत्यु दुःख और अपवित्रता ने उन्हें संसार त्याग और निवृति की ओर उत्प्रेरित किया। अंततः एक रात सिद्धार्थ अपनी पत्नी य ोधरा तथा पुत्र राहुल को छोड़कर 29 वर्श की अवस्था में मुक्ति मार्ग की खोज के लिए निकल पड़े। इस घटना को बौद्ध साहित्य में 'महाभिनिश्क्रमण' कहते है।

सिद्धार्थ अपने प्रिय अ व कन्धक और सारथी छन्दक को लेकर रात्रि में ही राज्य छोडकर चल पड़े। रास्ते में उन्होंने अपने वस्त्र, आभूशण उत्तर डाले और श्रमण वस्त्र धारण कर लिया। ललितविस्तार के अनुसार सिद्धार्थ ने यह कार्य मैनेयों के नगर अनुवैनेय में सूर्योदय के समय किया जब वे भााक्य कोलिय और मल्ल के जनपदों से आगे निकलकर अनोमा नदी पार कर चुके थे। उन्होंने सात दिन अनुपिय नामक आम्र–अद्यान में बिताये। इसके बाद वे राजगृह पहॅूचे जहॉ उनका राजकीय स्वागत किया गया। किन्तु इसका सिद्धार्थ पर कोई असर नहीं हुआ। वे सत्य की खोज में आगे बढते गये। वे आलारकालाय नामक सिद्ध तपस्वी के पास पहॅूचे जो अपनी साधना, सांख्य द ान ओर वैरागय के लिए विख्यात थे। किन्तु सिद्धार्थ की ज्ञान पिपास यहाँ भाांत ने हुई। तब वे उद्रक से भिन्न योग का ज्ञान प्राप्त हुआ। किन्तु सिद्धार्थ का मन न लगा और सत्य की खोज जारी रही। भ्रमण करते हुए वे मगध जनपद के सैनिक सन्निवे ा उरूबेला पहूँचे जहाँ उन्होंने निरंजना नदी के तट पर एक वृक्ष के नीचे बैठकर छह वर्श तक घोर तपस्या की । प्राणयाम के अभ्यास से भारीर को काफी कश्ट देने के बावजूद भी उन्हें ज्ञान नहीं मिला। निराहार और एकाधर से उन्होंने भारीर को इतना कश्ट दिया कि वह अस्थिपंजर मात्र रह गया। उन्होंने महसूस किया कि भोजन ग्रहण करना चाहिए तथा काया को कश्ट देने से कोइ लाभ नहीं। इस तपः साधना में उनके साथ पाँच और परिव्राजक थे जो पंचवर्गीय भिक्षु (पॉच की गुट में भ्रमण करने वाले भिक्षु) कहे जाते थे। उनके नाम थे आंज, कौडिन्य, अस्सजि, वप्प महानाम और मछिय। इन तपस्वियों ने सिद्धार्थ के नैतिक और मानसिक जीवन में बहुत सहायता की थी। वे प्रकृति और कर्म के सिद्धान्तों की भी चर्चा करते थे तथा सांख्य और ब्राह्मणेतर चिन्तन पद्धति का भी अन्वेशण करते थे।

जातक कथा से विदित होता है कि सिद्धार्थ ने भोजन ग्रहण करने का नि चय कर उरूबेला के सेनानी की पुत्री सुजाता से भोजन प्राप्त कर अपना अन ान तोड़ा था। इस पर कौडिन्य सहित पाँच ब्राह्मणों ने पथ भ्रश्ट माना और वे उन्हे छोड़कर ऋशिपतन चले गये। तत्प चात् सिद्धार्थ, गया पहॅुचकर वह वृक्ष के नीचे पुनः ध्यान मग्न हो गए। सात दिन और सात रात समाधिस्थ होकर उन्होंने निरन्तर निर्विहन तप किया। आठवें दिन वै ााख पूर्णिमा को उन्हें सत्य और ज्ञान का आलोक मिला। इससे उनका सम्पूर्ण भारीर और मन प्रकाि ात हो उठा और उन्हें "सम्बेधि" की प्राप्ति हुई। अतः वे "तथागत" और "बुद्ध" कहे गए। नीधि प्राप्ति का स्थान "बोधगया" और जिस वह वृक्ष के नीचे उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ वह "बोधि वृक्ष" कहा गया। अब बुद्ध के मन में यह भावना आई मैं तो जागा किन्तु जब मैं जगत को जगाऊॅ तभी मेरा जागना सार्थक है।

विभिन्न कश्टों ओर दुःखों से पीड़ित जनता को ज्ञान और सत्य की ि ाक्षा देने बुद्ध निकल पड़े। गया में उन्होंने तपस्सु और माल्लिक नामक दो बनजारों को उपदे ा देकर अपना अनुयायी बना लिया। समाज के भाूद्र और दलित वर्ग के प्रति उनके स्नेह और प्रेम का यह प्रमाण है। गया से वे का ाी के ऋशिपत्तन (सारनाथ) नामक स्थान में पहुंचे। वहाँ उन्होंने अपना प्रथम धर्मोपदे ा दिया और उन पाँचों तपस्वियों को दीक्षा दी, जिन्होंने, उन्हें पथभ्रश्ट समझकर, उनका साथ त्याग दिया था। पाँचों तपस्वी उनके ि ाश्य बन गए। बौद्ध साहित्य में इसे "धर्मचक्र प्रवर्तन"

कहते है। फिर तो अनके लोग बुद्ध के अनुयायी बनाने लगे। उन्होंने अपनी ि ाश्य–मंडली का एक संघ बनाया। अपने ि ाश्यों को बुद्ध ने उपदे ा दिया । ''भिक्षुओं! अब तुम लोग जाओ भ्रमण करो, तुम लोगों के हित के लिए तुम में से कोई एक साथ न जाए! तुम लोग उस धर्म का प्रचार करो जो आदि–मंगल है, मध्य मंगल है, और अन्त–मंगल है।

min'k % ck) /ke dk fl)kUr

बुद्ध ने परिव्राजक को अतिकिलमथ अनुयोग और कामसुखल्लक अनुयोग (काया–क्ले ा और काम–सुख) से बचने का उपदे ा दिया। उसे 'मज्झिम पतिपदा' (मध्यम मार्ग) का अनुसरण करना चाहिए तथा 'सत्य चतुश्टय (चार आर्य सत्य) का पालन करना चाहिए।

चार आर्य सत्य– (क) संसार में दुःख है, जीवन, वृद्धावस्था, मुत्यु सभी दुख हैं (ख) दुःख के कारण है, सभी कारणों का मूल है तृष्णा (लालसा) (ग) इनसे मुक्ति मिल सकती है एवं (घ) इनके उपाय भी है।

अष्टांगिक मार्ग– दुःखों के निवारण का मार्ग 'अश्टांगिक मार्ग' कहा जाता है।

ये आठ अंग निम्नलिखित हैः–

1. **सम्यक् दृष्टि**– सबसे पहले हमारा दृश्टिकोण ठीक हो। जैसा दृश्टिकोण होगा वैसा ही हमारा काम होगा, तदनुरूप उनका परिणाम होगा।
2. **सम्यक् संकल्प**– हमारे संकल्प ठीक हो। गलत काम करने का हम नि चय ने करें। हमारे विचार पवित्र और भाुद्ध हो।
3. **सम्यक् वाक्य–** हमारे वचन सही हो। बोलचाल ठीक नहीं रहने पर मनुश्य स्वयं तो दुः ाी रहता ही है, दूसरों को भी दुःख देता है। अतः सम्यक् वाक्य हो।
4. **सम्यक् कर्म**– हमारे कार्य सम्यक् हों। गलत काम करके मधुफल की आ ाा हम नहीं कर सकते।
5. **सम्यक् आजीविका**– हमारी आजीविका के साधन ठीक हो कोई गलत या बुरी आजीविका न अपनायें।
6. **सम्यक चेष्टा**– हमारी चेश्टाएं सही हो किसी लाभ की प्राप्ति के लिए गलत काम नहीं करें।
7. **सम्यक् स्मृति**– हमारी यादगारी सही रहे। स्मृति गलत रहने से भी हमारे भाव तथा विचार उनसे प्रभावित हो जाते है। गलत धारणा में हम गलत काम कर देते है।
8. **सम्यक् समाधि**– हमारा ध्यान सही हो आध्यात्मिक चेतना सही हो।

दस शील– बुद्ध ने नैतिक आचरण को भाुद्ध और संतुलन करने पर वि ोश बल दिया। इसके लिए उन्होंने दस भील के उपदे ा दिए। ये दस भील हैः– अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, नृत्य–गान का त्याग, श्रृंगार–प्रसाधनों का त्याग, समय पर भोजन करना, कोमल भाश्या का त्याग एवं कामिनी कंचन का त्याग। इनमें प्रथम पाँच गृहस्थों के लिए आव यक थे परन्तु संघ में प्रवे ा करने के वाले भिक्षुओं के लिए दसों भील का पालन करना अनिवार्य था।

अनिश्वरवाद तथा अनात्मवाद – बौद्ध धर्म मूलतः अनिश्वरवादी है सृष्टि का कारण ईश्वर नही बुद्ध ने ईश्वर के स्थान पर मानव प्रतिष्ठा पर ही बल दिया। इसी प्रकार आत्मा की परिकल्पना भी नही की परन्तु पुनर्जन्म को माना गया है। बुद्ध के अनुसार यह आत्मा नही जो पुर्नजन्म लेती है वरन् ये कर्म है इच्छाएं है जो पुर्नजन्म लेती हैं। इसलिए कर्मफल को माना गया है।

बौद्ध धर्म का प्रचार– ऋशिपतन में वर्शा ऋतु बिताने के बाद बुद्ध उरूवेला की और चल पडे। मार्ग में उन्होंने तीस पथभ्रश्ट नवयुवकों को अपना अनुयायी बनाया। उनके प्रधान का नाम भद्र था अतः ये भद्रवर्गीय कहलाये। उरूबेला पहुँचकर उन्होंने अग्निहोत्री जटिल ब्राह्मण के तीन ि ाश्यों – मुख्य क यप, नदी क यप और गया क यप को अपना अनुयायी बनाया। ये तीनों सगे भाई थे। उनके क्रम ाः 500,300 और 200 जटा–पंडित ि ाश्य थे। ये सभी बुद्ध के अनुयायी बन गए। अपने इन ि ाश्यों के साथ बुद्ध राजगृह आए, जहाँ सम्राट विम्बिसार ने उनका आदर किया और श्रद्धास्वरूप वेणुवन दान में प्रदान किया। राजगृह में संजय नामक तपस्वी अपने 250 ि ाश्यों के साथ बुद्ध के संघ में

सम्मिलित हो गया। इन ि ाश्यों में सारिपुत्र और मोग्गल्लान महान् विद्वान थे। राजगृह में अनेक लोग बुद्ध के अनुयायी बन गए।

भ्रमण करते हुए बुद्ध अपनी जन्मभूमि कपिलवस्तु पहुँचे। वहाँ उन्होंने अपने परिजनों को उपदे ा दिया और कुछ को भिक्षु बनाया। वहाँ पर बुद्ध की पालक माता महाप्रजापति गौतमी ने भी प्रवच्या ग्रहण करने की उत्कट अभिलाशा प्रकट की । बुद्ध नहीं चाहते थे कि नारियां बौद्ध संघ में प्रवे ा करे। अपने परम ि ाश्य आनन्द के अनुनय–विनय करने पर बुद्ध ने गौतमी को प्रवज्या ग्रहण करने की अनुमति दे दी। इसके साथ नारियों पर कड़ा अनु ाासन रखा। इस तरह सर्वप्रथम भिक्षुणी संघ स्थापित किया गया। गौतमी की पुत्री, नन्दा और बुद्ध की पत्नी, य ाोधरा भी प्रवज्या ग्रहण करके भिक्षुणी बन गई।

कपिलवस्तु से लौटते समय मार्ग में अनुपिय नामक स्थान पर महात्मा बुद्ध ने भााक्य भाासकों भद्रिक आनन्द, अनुरुद्ध, उपालि तथा देवदत्त को उपदे ा देकर उन्हें बौद्ध धर्म में दीक्षित किया। आनन्द तो उनका कट्टर समर्थक बन गया, किन्तु देवदत्त उनका विरोधी बन गया। वह बौद्ध संघ से बुद्ध को हटाकर स्वयं संघ का प्रधान बनना चाहता था। किन्तु उसे इसमें कोई सफलता नहीं मिली। उसने तीन–बार बुद्ध की हत्या का प्रयास भी किया। एक बार उसने धनुर्धारियों को बहकाया , किन्तु बुद्ध के निकट पहुँचकर उनके हृदय परिवर्तित हो गए। दूसरी बार, देवदत्त ने गृद्धकूट पर्वत के ि ाखर पर से एक ि ालाखंड तब गिरवाया जव बुद्ध नगर की ओर आ रहे थे। इसमें बुद्ध के पैर के अगूठे में चोट आई। जिसकी बड़ी श्रद्धा से जीवक ने चिकित्सा की। तीसरी बार देवदत्त ने अपने भाासकीय हस्तिचालक को आदे ा दिया कि वह नालगिरि नामक हाथी को मदमस्त कर उस मार्ग पर छोड़ दे जिधर से बुद्ध आया जाया करते थे। किन्तु आ चर्य की बात यह है कि मदमस्त हाथी ने सूंड से बुद्ध के चरण रज को लेकर अपने मस्तक पर डाला।

बुद्ध ने राजगृह को अपना कार्य केन्द्र बनाया क्योंकि वहॉ अनेक सुविधायें प्राप्त थी। वहां वे सीतावन में ठहरे हुए थे तथा लोगों को उपदे ा दिया करते थे। श्रावस्ती का श्रेश्ठि सुदल यहीं बौद्ध धर्म ने दीक्षित हुआ था। उसने श्रावस्ती के राजकुमार जेत काफी स्वर्ण मुद्रायें देकर, जेतवन खरीद लिया और बुद्ध को दान दिया। उसे जेतवन विहार में बुद्ध ने पच्चीस वर्श विताए थे। भरहूत स्तूप की मूर्ति पर इस दान का दृ य अंकित है।

श्रावस्ती मं एक वि ााल विहार बनवाया गया था जिसकी आर्थिक सहायिका और संरक्षिका वि ााखा थी। वह अंग जनपद के मछिय ग्राम के सेठ की दुहिता थी। वह भी बौद्ध धर्म में दीक्षित हो गई। उसने अपने अमूल्य ि ारोभूशण बेचकर पूर्वाराम विहार का निर्माण करवाया। भगवान बुद्ध जब कभी श्रावस्ती आते तो कभी जेतवन विहार में ठहरते और भी पूर्वाराम विहार में। वि ााखा ने वहां के परिव्राजकों के लिए भोजन, औशधि, स्नान धाटी आदि का प्रबन्ध कर दिया था।

बुद्ध को वै ााली यात्रा के लिए समस्त लिच्छवि संघ ने आमंत्रित किया था। उस समय वहॉ महामारी का बड़ा प्रकोप था लोगो का वि वास था कि बुद्ध के आने से महामारी समाप्त हो जाएगी। बुद्ध का वहां बड़ा स्वागत किया गया। आम्रपाली (वहाँ की गणिका) ने बुद्ध का आदर सत्कार किया तथा साथ ही आम्रपाली वन भी दान में दिया।

बुद्ध ने श्रावस्ती के तिस्स नामक भिक्षु की स्वयं परिचर्या की । वह चर्मरोग से पीड़ित था। बुद्ध स्वयं गरम जल से उसे स्नान कराया और नवीन वस्त्र धारण कराके भिक्षुओं से कहा ''तुम लोगों के माता–पिता नहीं हैं, इसलिए तुम लोग एक दूसरे के माता–पिता बनो।'' श्रावस्ती में ही उन्होंने अंगुलिमान नामक क्रूर डाकू का हृदय परिवर्तन किया। वह बौद्ध भिक्षु बन गया।

महात्मा बुद्ध पैतालिस वर्शो तक अनवरत धर्मापदे ा करते रहे। वे पावस काल को छोडकर बराबर पर्यटन पर रहते थे तथा विभिन्न नगरों ओर ग्रामों में जाकर लोगों के दुःख दूर करने का प्रयास करते थे। वे पूरब में चम्पा (भागलपुर) और संथालपरगना तक, प ि चम में कुरूक्षेत्र के कम्पासदम्म और भाुल्लकोद्वित नगरों तक, उत्तर में कपिलवस्तु तथा दक्षिण में कौ ााम्बी तक के क्षेत्रों में गए थे। 25 वर्श उन्होंने श्रावस्ती में बिताये। विम्बिसार और प्रसेनजीत जैसे सम्राट, सुदल जैसे सेठ, जीवक जैस चिकित्सक, अंगुलिमाल जैसे डाकू आदि उनके अनुयायी थे।

बुद्व का अंतिम कालः महापरिनिर्वाण– अस्सी वर्श की आयु में पावा के निकट कु ाीनगर (कु ाीनारा) में बुद्ध का निधन हो गया, बौद्ध साहित्य में इसे महापरिनिर्वाण कहा गया है। उनके दाह संस्कार के प चात् उनके भस्माव ोश

के लिए आठ दावेदार हो गए थे जिन्होंने उन पर स्तूप निर्माण की बात कही। इनमें प्रमुख थे – मगध सम्राट अजात भात्रु, वै ाली के लिच्छवि गण, पावा के मल्ल, कु ीनारा के मल्ल तथा रामग्राम के कोलियगण।

बुद्ध के प्रधान शिष्य– महात्मा बुद्ध के अनुदायियों की संख्या बहुत अधिक थी। किंतु उनमें कुछ ऐसे ि ाश्य थे जो बुद्ध के काफी निकट थे और बौद्ध संघ में इनकी प्रधानता थी। वे अपनी विद्वता और सच्चरित्रता के लिए भी प्रसिद्ध थे। उनमें सारिपुत्त, आनन्द, मौद्गलयान, उपालि, सुनीति, सुदल, आदि भिक्षु तथा य ोधरा, नन्दा, आम्रपाली , महाप्रजापति गौतमी आदि भिुक्षुणियां प्रमुख उपालि थे।

बुद्ध के विरोधी– बुद्ध की बढती लोकप्रियता से कुछ लोग विक्षुब्ध थे। देवदत्त इनमें मुख्य का उसने तीन बार बुद्ध की जान लेने की कोि ा ा की । मगध, अंग, को ाल आदि के ब्राह्मणों ने भी बुद्ध का कड़ा विरोध किया और उनके धर्म की कटु आलोचना की।

ck) /ke d mRFkku d dkj.k

बौद्ध धर्म के उत्थान के कारण निम्नलिखित है–

1. **सरलता**– बुद्ध के आद ा बहुत ही सरल थे और जीवन संबंधी उनकी दा ानिकता साधारण नियमों पर आधारित थी। सभी नियम युक्तिसंगत और तर्कसंगत थे। उपदे ाों की विवेचना बोलचाल की भाशा में की गई। तत्कालीन समाज में ब्राह्मणों ने धार्मिक जटिलता तथा कर्मकांड को बहुत बढ़ा दिया था, दूसरी ओर बुद्ध का धर्म सरल था अतः लोग उनकी तरफ आकृश्ट हुए। उन्होंने सभी वर्ग के लोगों के लिए मोक्ष प्राप्ति के द्वार खोल दिए।
2. **प्रभावशाली व्यक्तित्व**– बौद्ध धर्म के प्रचार में महात्मा बुद्ध के प्रभाव ाली व्यक्तित्व का व्यापक प्रभाव थे। उनका व्यक्तित्व आकर्शक तथा प्रभावोत्पादक था। वे स्वयं विद्वानों ने भी उनसे प्रभावित होकर बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया था।
3. **बौद्ध संघ**– बौद्ध संधों का भी यथेश्ट योगदान है। संघ के भिुक्षुओं तथा भिक्षुणियों ने धर्म का प्रचार किया। उनके दो ही उद्दे य ये एक, धर्म के आद ार्ो का पालन कर अपने जीवन को उज्जवल करना तथा दूसरा जनसाधारण में बौद्ध धर्म का प्रचार करना ।
4. **संरक्षण–** महात्मा बुद्ध के धर्म के उत्थान का एक प्रमुख कारण यह भी था कि बड़े सम्राटों, राजाओं सेठ–साहूकारों एवं प्रभाव ाली व्यक्तियों ने इस धर्म को स्वीकार कर इसके प्रचार कार्यों में हाथ बंटाया था। स्वयं महात्मा बुद्ध एक राजकुमार थे किंतु उन्होंने सभी सुखों का त्याग किया। जनता इनसे काफी प्रभावित थी। मगध के महाराजा बिम्बिसार, कौ ाल नरे ा प्रसेनजीत, अवन्ति के राजा प्रधौत ने, इस धर्म का अपनाकर इसका खूब प्रचार कराया। अ ोक ने अपनी पूर्ण–भाक्ति बौद्ध धर्म के प्रचार में लगा दी। धर्म की व्याख्या के लिए उसने स्वयं परिभ्रमण किया तथा इसके आद ाों को जहाँ–तहाँ खुदवाया। प्रजा के आचरण पर निगरानी रखने के लिए उसने कुछ अधिकारी नियुक्त किए। उसने दे ा में ही नहीं अपितु विदे ाों में इस धर्म का प्रचार कराया। उसके काल में बुद्ध की मूर्तियां बनने लगी थी तथा इसकी विधिवत पूजा भी भाुरू हो गई थी। कनिश्क और हर्श ने भी बौद्ध धर्म को राजकीय संरक्षण दिया। पाल वं ा के राजाओं ने भी बौद्ध धर्म का खूब प्रचार प्रसार किया।
5. **लोकभाषा का प्रयोग**– उस समय सभी ग्रन्थ संस्कृत में थे। धार्मिक वाद–विवाद भी संस्कृत भाशा में लिपिद्ध होती थी। जन–साधारण उन्हें समझने में असमर्थ थे। भगवान बुद्ध ने अपना उपदे ा साधारण जनता की भाशा पालि में दिया, भिक्षुओं ने भी इसी भाशा में धर्मोपदे ा दिए। जनसाधारण पर इसका वांछित प्रभाव पड़ा।
6. **बौद्ध धर्म की मान्यताएं आर्थिक प्रगति के अनुकूल होना** – बौद्ध धर्म वैदिक परम्परा के विपरीत समुन्द्री व्यापार के प्रति अनुकूल दृष्टिकोण दिया इसलिए वैश्य वर्ग ने ना केवल इस धर्म को अपनाया अपितु प्रोत्साहन भी दिया जैसे गया तथा सांची के स्तूपों में वर्णित दृश्यों से स्पष्ट है कि वैश्यवर्ग बौद्ध धर्म को अपनाकर नया दान आदि देकर विशेष प्रोत्साहन दिया।

बौद्ध धर्म का पतन– बौद्ध धर्म ही एक ऐसा धर्म है जो उसी देश में, जिस दे ा में इसका जन्म हुआ, लुप्त हो गया। किंतु विदे ाों में खूब फला–फूला, जहाँ आज भी इसके अनुयायी है। भारत में 14वीं सदी तक इसका पतन हो गया। इसके निम्मलिखित कारण थेः–

1. **बौद्ध संघ में दोष**– कालान्तर में बौद्ध संघों में अनेक दोश आ गए। बौद्ध विहारों में भिक्षु–भिक्षुणियों की चारित्रिक पवित्रता नश्ट हो जाने के कारण उनके प्रचार कार्यो में ि ाथिलता आ गई थी। विहारों के प्रचुर धन रा ि ा से अब ये लोग विलासिता का जीवन बिताने लगे थे। लोगों की दृश्टि में बौद्ध विहार अब व्यभिचार के अड्डे बन गए थे। उनका चरित्र अब बिल्कुल प्रेरणादायक नहीं रहा।
2. **कर्मकांडों की प्रधानता**– बौद्ध धर्म धीरे धीरे कर्मकांडों से ग्रस्त हो गया। बुद्ध की प्रतिमा की पूजा और विधि विधान पर बल दिया जाने लगा। अतः इसमें भी एक ऐसे वर्ग का जन्म हुआ, जो अध्यात्म पर ध्यान न देकर धार्मिक विधि विधान पर अधिक ध्यान देने लगा। बौद्ध धर्म जब तक आडम्बरहीन रहा लोग इससे प्रभावित होते रहे। किन्तु जैसे–जैसे यह आडम्बरों से पूर्ण होता गया, लोग इसके प्रति आकर्शण खोते गए।
3. **बौद्ध धार्मिक सिद्धान्तों में मतभेद**– बौद्ध भिक्षु धार्मिक सिद्धान्तों को लेकर आपस में लड़ने लगे और एक दूसरे का विरोध करने लगे। बौद्ध साहित्य की संख्या भी बढ़ गयी। जिन कुरीतियों के कारण हिंदू धर्म का पतन हुआ था, वे सभी कुरीतियां बौद्ध धर्म में प्रविश्ट हो गई। जनसाधारण इस धर्म को नास्तिक धर्म समझकर इससे विमुख होता गया।
4. **ब्राह्मण धर्म का पुनरूत्थान**– इसी समय ब्राह्मण धर्म का पुनरूत्थान हुआ। ब्राह्मण विद्वान अपनी खोयी हुई प्रतिश्ठा पुनः स्थापित करने के लिए दे ा के के विभिन्न भागों का भ्रमण करने लगे। इनमें प्रमुख थे भांकराचार्य, कुमारिल भटट, रामानान्द, प्रभाकर आदि। इन्होंने जगह–जगह बौद्ध धर्माधार्यों से भाास्त्रार्थ किया और उन्हें तर्क द्वारा पराजित किया। इसका जनसाधारण पर अच्छा प्रभाव पड़ा।
5. **संरक्षण का अभाव–** बौद्ध धर्म के पतन का एक कारण यह भी था कि कालांतर में इसे राजा महाजराओं का वह संरक्षण नहीं मिला जो इसे पहले मिला था। सातवाहन राजाओं ने इस धर्म को अपनाया तथा इसे संरक्षण दिया। लगभग 200 वर्शो तक विदे ाी यूनानी इससे प्रभावित रहे। किन्तु अधिकां ा भाासकों द्वारा इस धर्म को कोई प्रोत्साहन नहीं मिला । गुप्त सम्राटों ने बौद्ध धर्म को नहीं अपनाया, बल्कि उन्होंने ब्राह्मण विद्वानों को प्रोत्साहन दिया। अतः बौद्धधर्म राजधर्म नहीं रह गया और इसका पतन प्रारंभ हो गया।
6. **बौद्ध धर्म में स्त्रियों का प्रवेश**– बौद्ध संघ में स्त्रियों के प्रवे ा से अनेक कुरीतियों का जन्म हुआ। महात्मा बुद्ध ने उनके आचरण संबंधी कठोर नियम बनाए थे। भिक्षु और भिक्षुणियों के रहने की व्यवस्था अलग–अलग थी। वे भिक्षुओं से किसी प्रकार का वाद–विवाद या संपर्क नहीं रख सकती थी। बुद्ध की मृत्यु के प चात् इन नियमों के पालन में ि ाथिलता आ गई। कुछ ही वर्शो में विहारों में स्त्रियों की संख्या अत्याधिक हो गई। भिक्षुओं के लिए ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करना असंभव हो गया। अतः विहारों का भाुद्ध वातावरण दूशित होने लगा तथा सदस्यों का नैतिक जीवन जनसाधारण की दृश्टि में हेय समझा जाने लगा।
7. **मुस्लिम आक्रमणकारी**– मुस्लिम आक्रमणकारी कट्टर थे तथा इस्लाम के प्रचार के लिए उन्होंने भारतीय धर्मों के विरूद्व जेहाद भाुरू कर दिया। हिंदू मंदिरों तथा बौद्ध विहारों को नश्ट कर दिया। भिक्षु–भिक्षुणियों की खुलकर हत्या की। नालन्दा जैसे बौद्ध ि ाक्षा केन्द्र को जला डाला। भारत के अधिकां ा बौद्ध केद्रों को मुसलमानों ने समाप्त कर दिया।
8. **राजपूत जाति का उत्थान**– राजपूत जाति का उत्थान बौद्ध धर्म के पतन का कारण बनी। युद्धप्रियता राजपूतों की स्वाभाविक प्रवृति थीं। वे बौद्ध धर्म के कट्टर विरोधी थे। जब उत्तर भारत क बड़े भाग में राजपूत सेर्वसर्वा हो गए, तब वहाँ बौद्ध धर्म को किसी प्रकार का संरक्षण नहीं मिला। राजपूत हिंदू धर्म के संरक्षक और पोशक थे।

बौद्ध सम्प्रदाय– महायान सम्प्रदाय की स्थापना का श्रेय नागार्जुन को है। इस सम्प्रदाय के लोगों ने बौद्ध धर्म के सिद्धांतों मे परिवर्तन किए। ये लोग मूर्ति पूजा के समर्थन थे तथा संस्कृत भाशा का प्रयोग करते थे। अब मानव बुद्ध की जगह "लोकोत्तर बुद्ध" की स्थापना हुई।

जिन लोगों ने महात्मा बुद्ध के मूल उपदे ाों को ग्रहण किया वे 'हीनयान सम्प्रदाय' के गिने जाने लगे। उन्होंने बुद्ध के उपदे ाों के अनुसार आचार–विचार की पवित्रता तथा ज्ञान वृद्धि के महत्व को प्रतिपादित किया।

बाद में चलकर बौद्ध धर्म में एक तीसरा सम्प्रदाय आया जो वज्रयान के नाम से प्रसिद्ध है। उन्होंने बुद्ध को ऐसा आद र्ा पुरूश बनाया जिन्हें अलौकिक सिद्धियां प्राप्त है। नागपंथ आदि का प्रचलन हुआ।

'महायान' भाब्द का प्रयोग सर्वप्रथम कनिश्क के भाासन काल में हुआ, किन्तु इसका बीज महात्मा बुद्ध के उपदे ाों में निहित है बुद्ध ने कहा था कि निर्वाण प्राप्त करने के तीन मार्ग हैः–

1. कुछ लोग दूसरों की चिन्ता किए बिना अपनों चिन्ता करते है। ऐसे लोग अर्हत बनकर अपने उद्दे य का प्राप्त कर सकते है। इस मार्ग को 'अर्हतयान' कहते है।
2. कुछ लोग अपनी मुक्ति के साथ साथ दूसरों का भी कल्याण सोचते है ऐसे लोग 'प्रत्यक्ष बुद्धायन' द्वारा अपने उद्दे य को पूरा करते है।
3. कुछ लोग अपनी चिंता न करके दूसरों के कल्याण के लिए हो जीते हैं और अपना संपूर्ण जीवन दूसरों के कल्याण में लगा देते है। ऐसे लोग "बुद्धयान" का मार्ग अपनाते है। महायान सम्प्रदाय के लोगों ने यही मार्ग अपनाया।

बौद्ध धर्म की देन– बौद्ध धर्म ने भारत की सभ्यता संस्कृति, चिंतन धारा, सामाजिक जीवन आदि को काफी प्रभावित किया है। इनकी देन निम्नलिखित हैः–

1. **कला व वस्तु कला के क्षेत्र में** – बोधिसत्व की मूर्तियां तथा स्तूप आदि बनने लगी। इसके अनुकरण में हिन्दु देवी देवताओं की मूतियों तथा मंदिर भी बनाई जाने लगी। अतः मूर्तिपूजा हिंदू धर्म का अभिन्न अंग बन जाने का एक कारण देवी–देवताओं की मूर्तियों का निर्माण प्रारंभ होना है।
2. **लोकभाषा का विकास**– तत्कालीन लोकभाशा पालि में उपदे ा देकर गौतम बुद्ध ने लोकभाशा के उत्थान का रास्ता खोल दिया।
3. **भारतीय इतिहास**– अहिंसा पर जोर देकर बौद्ध धर्म मे भारत की राश्ट्रीय प्रकृति का भाांतिमय बनाने में योगदान दिया।
4. **तर्कवाद को प्रश्रय**– बुद्ध ने धर्म के क्षेत्र में स्वतन्त्र चिन्तन और तर्क पर जोर दिया। इससे धर्म और द र्ान के क्षेत्र मे स्वतन्त्र चिन्तन को प्रोत्साहन मिला।
5. **पड़ोसी देशों के साथ सम्पर्क**– चीन, वर्मा, सिंहल आदि अनेक दक्षिण–पूर्वी एि ायाई दे ाों में बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ। विदे ाों से भी अनेक छात्र और जिज्ञासु विद्वान भारत आते थे। इससे इन दे ाों के साथ भारत का धनिश्ठ सम्पर्क बढ़ा।
6. **बौद्ध धर्म की शिक्षाएं आर्थिक विकास के अनुकूल** – बौद्ध धर्म का अंहिसा पर बल और यज्ञों के विरोध ने पशुधन की रक्षा की जो कि कृषि, पशुपालन तथा व्यापार को समुन्नत करने में सहायक सिद्ध हुई।